रेगिस्तान में तलाश

मेहुल जोशी द्वारा पुनर्लिखित कहानी

एक चतुर कौए की यह कहानी ईसप की एक नीति-कथा से पुनर्लिखित है। पितृपक्ष के अनुपालन में कौओं का विशेष महत्त्व है। पितृपक्ष पूर्वजों का सम्मान करने के लिए समर्पित अवधि है। वैदिक काल में आरम्भ हुई इस परम्परा के एक भाग के रूप में लोग धार्मिक कृत्य करते हैं व अपने दिवंगत प्रियजनों के लिए आध्यात्मिक अभ्यास समर्पित करते हैं। ऐसी ही एक विधि है अन्नदान करना, पूर्वजों के नाम पर प्राणियों—विशेषकर कुत्तों, गौओं और कौओं—को भोजन खिलाना। ऐसा कहा जाता है कि अर्पित किया गया यह भोजन अन्ततः हमारे पितरों द्वारा ग्रहण किया जाता है जो उन्हें पोषित कर सन्तुष्टि प्रदान करता है।

वान नामक कौआ मध्य ऑस्ट्रेलिया के झुलसते हुए रेगिस्तान के लाल विस्तार के ऊपर उड़ रहा था। उड़ते हुए उसने तेज़ी-से व बड़ी कुशलता से अपने पँखों को मोड़ा और बस वहाँ पहुँच गया! वह उस उष्ण हवा के प्रवाह तक पहुँच गया जो ऊँचा. . . और ऊँचा. . . उड़ने में और बिना किसी प्रयास के, नीले गगन के तले हवा में तैरने में उसकी सहायता करेगा। यह एक ऐसी तरक़ीब थी जो उसने अपनी माँ से सीखी थी—तेज़ बहती हवाओं में सहजता से उड़ने का तरीक़ा; वह तरक़ीब जो उसके परिवार में पीढ़ी-दर-पीढ़ी कौओं को सिखाई गई थी।

वान ने नीचे, धरती को ग़ौर से देखा। पिछली बारिश के बाद उगे जंगली फूलों के चमकदार विस्तार ने तपती धरती को ढक तो दिया था, पर थोड़े ही समय के लिए; और अब फूलों से भरे वे मैदान लुप्त हुए काफ़ी समय बीत चुका था। अब जो कुछ भी बचा था, वह थे गेरुए रंग के टीले जिन्हें तेज़ हवाओं ने लम्बी समानान्तर पंक्तियों में बदल दिया था।

चटकीले नीले आसमान में वान के चमकते, काले-स्याह पँख, निष्ठुर-से लगने वाले सूर्य के नीचे जगमगा रहे थे मानो उसके पँखों को पानी में भिगो दिया गया हो। परन्तु ऐसा कैसे हो सकता था? वान को याद था कि इस अकाल में जो कि अब तक का सबसे भीषण अकाल था, पिछले सौ दिनों से भी ज़्यादा समय से बारिश की एक भी बूँद नहीं गिरी थी। कौए का सूखता हुआ गला इस बात की ओर लगातार संकेत कर रहा था कि उसकी सम्भावित नियती क्या होगी।

अब तो कई दिन हो गए थे, वान हवा में उड़ते हुए, पानी की तलाश करता रहा था; परन्तु सफलता हाथ नहीं लग रही थी।

पर कोई बात नहीं! वान एक कौआ था। वह हार मानने वाला नहीं था। थकी हुई आँखों से उसने नीचे रेगिस्तान की भूमि को फिर एक बार ग़ौर से देखा।

अचानक उसे कुछ दिखाई दिया। गरमी के कारण लहरों जैसा कुछ धरती पर झिलमिला रहा था और सतह पर तरह-तरह के आकार बन रहे थे। क्या यह उसकी मात्र कल्पना थी?

नहीं! नीचे की ओर उड़ते-उड़ते उसे दिखाई दी एक पुरानी झोपड़ी, फूस से बनी उसकी टूटी-फूटी-सी छत और उसके साथ ही, छाया। आऽऽह, अनमोल छाया! छाया जानवरों, आदिवासियों और वहाँ बसने वालों को रेगिस्तान की झुलसा देने वाली गरमी से बड़ी राहत देती है। वान को अपने अन्दर अपनी माँ का लयबद्ध गाना उभरता हुआ महसूस हो रहा था, "छाया अनमोल है। छाया जीवन है।" उसने अपने पँखों को समेटा और तेज़ी-से उस झोपड़ी की ओर उड़ा।

जैसे ही वान उस शीतल छाया में एक फलक पर जाकर बैठा, उसे वहाँ कुछ रखा हुआ दिखाई दिया—एक पात्र। तुरन्त उसकी चतुर बुद्धि दौड़ने लगी। उसने पात्र पर चोंच मारी, जाँच-पड़ताल की तो उसे पात्र के अन्दर से एक सुस्पष्ट, गड़गड़ की आवाज़ सुनाई दी। पानी! वह एक पानी का मटका था जिसे उस ख़ाली झोपड़ी में एक फलक पर छोड़ दिया गया था।

निश्चित ही, यह तो एक चमत्कार था। "वाऽऽऽ!" वान ने खुश होकर अपनी कर्कश ध्वनि में ज़ोर-ज़ोर-से गीत गाना शुरू किया जो उसके नाम के जैसा ही लग रहा था, "वाऽऽऽ!"

अपने पँख पसारकर वान उस मटके के बगल में जाकर बैठ गया। वह पात्र सुराही जैसा था जिसमें एक टोंटी थी और उसका छोटा-सा मुँह एक कार्क से बन्द किया हुआ था।

वान फ़ौरन काम पर लग गया। उसने अपने पंजो से उस सुराही की टोंटी को पकड़ा, कार्क को अपनी चोंच में फँसाया और ज़ोर-ज़ोर-से पँख फड़फड़ाते हुए अपनी पूरी ताक़त लगाकर उसे खींचकर खोलने लगा। परन्तु कार्क टस से मस न हुआ।

वान थोड़ा पीछे हटा और उस सुराही को देखने लगा, और एक बार फिर ऐसा लगा मानो उसकी माँ उसके कान में धीरे-से कह रही हो : "तरक़ीब, ताक़त को मात देती है।" वान अपना सिर एक ओर झुकाकर सोच में पड़ गया कि यहाँ उसे कौन-सी तरक़ीब अपनानी होगी? अब उसने अपनी चोंच को इस प्रकार फँसाया कि वह अब कार्क खींचने की बजाय उसे घुमा रहा था; उछल-कूद करते हुए कभी इस ओर से, तो कभी उस ओर से, उसे खोलने की कोशिश कर रहा था।

और बेशक़, 'टक' आवाज़ हुई। कैसी राहत मिली उसे! कार्क बाहर आ गया!

वान सुराही के तल में भरे जीवनप्रद पानी को पीने के लिए आगे बढ़ा। वह भरसक प्रयास करता जा रहा था पर उसका सिर सुराही की पतली गरदन में से नीचे, उस तरसाने वाले पानी तक पहुँच ही नहीं पा रहा था।

अब वह क्या करे?

उसने सुराही को टेढ़ा करने का प्रयास किया। पर वह बहुत भारी थी।

उसने एक छोटी लकड़ी डालकर पानी निकालने का प्रयास किया। परन्तु यह भी बहुत मुश्किल था।

उसने पत्थर से उस सुराही की गरदन तोड़ने की कोशिश की। परन्तु सुराही बहुत मज़बूत थी।

वान सोचने लगा। अकसर तेज़ी-से काम करने वाला उसका दिमाग़ अब काम नहीं कर रहा था, उसे कुछ भी सूझ नहीं रहा था; रेगिस्तान की धूल में उड़ती सूखी हुई स्पिनिफेक्स नामक घास की तरह उसका दिमाग़ भी इधर-ऊधर घूम रहा था।

उसने पुरानी, बहुत पुरानी बातें याद करने की कोशिश की।

फिर उसे सूझा, जवाब नहीं बल्कि सवाल : ऐसे में उसकी माँ क्या करती?

वान की माँ एक समझदार काक थी। वह हर चुनौती को एक अवसर की तरह देखती थी, जगत को नए दृष्टिकोण से देखने का अवसर।

एक बार कौओं का उनका समूह भूखा था। उनमें से कोई भी अनाजगृह के अन्दर नहीं जा पा रहा था क्योंकि उसमें ताला लगा था। तब वान की माँ ने उन्हें सिखाया था कि कैसे वे सभी, धीमे-धीमे घूमने वाले पँखे के बीच से अन्दर छलाँग लगा सकते हैं, और एक मुड़े हुए पाइप से होकर नीचे अनाज तक पहुँच सकते हैं और वापस वहीं से बाहर आ सकते हैं—बिना किसी खरोंच के! वह तो बहुत रोमांचक था।

नई स्फूर्ति के साथ वान उड़ा और झोपड़ी के ऊपर चक्कर लगाने लगा, और खोजने लगा कि क्या कहीं से कोई समाधान मिल सकता है!

वान ने देखा कि वहाँ आस-पास की जगह पर ओपल [एक प्रकार का पत्थर] की खान के अवशेष, छोटे-छोटे स्लेटी व काले रंग के पत्थर पड़े हैं। फीकी लाल रंग की रेत में ये पत्थर अलग-से लग रहे थे; वे ऐसे दिखाई पड़ रहे थे मानो बहुत सारी काली-काली आँखें उसे देख रही हों—जिससे उसे लगा कि उसका समूह आस-पास ही है।

फिर उसे वे शब्द याद आए जो उसकी माँ ने उन सब से कहे थे। वह अकसर कहा करती थी, “एक-साथ मिलकर काम करो, तब तुम वह सब कुछ कर पाओगे जो तुम्हें करना है!”

“बिलकुल!” वान ने सोचा।

उसने ज़ोर-से काऽऽव-काऽऽव की आवाज़ निकाली जो बाक़ी के समूह को इस कार्य में जुट जाने के लिए एक बुलावा था।

कुछ ही पलों में पँखों वाली परछाइयों का समूह आसमान से नीचे उतर आया। समूह के हर एक कौए ने अपने पँख समेटे और वे सब वान के चारों ओर इकट्ठा हो गए। वे सभी एक स्वर में उसका नाम पुकारने लगे, “वाऽऽऽ, वाऽऽऽ।” फिर शान्ति छा गई, वे सब प्रत्याशा से उसकी ओर देखने लगे।

वान झुका, उसने अपनी चोंच में एक कंकड़ उठाया और सुराही में डाल दिया। फिर एक और डाला। और फिर, एक और कंकड़ डाला। कर्तव्यनिष्ठा के साथ अन्य कौओं ने भी ऐसा ही किया, उनका यह करना ऐसा लग रहा था जैसे एक अदृश्य हवाई नृत्य हो।

धीरे-धीरे और निश्चित रूप से, कंकड़-दर-कंकड़ पड़ते-पड़ते पानी सुराही में ऊपर आता गया।

और तब हर कौए ने एक के बाद एक, अपना सिर झुकाकर सुराही के अन्दर अपना मुँह डाला और अपनी प्यास बुझाई।

© एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।